



एग्री आर्टिकल्स

(कृषि लेखों के लिए ई-पत्रिका)

वर्ष: 06, अंक: 05 (सितम्बर-अक्टूबर, 2026)

www.agriarticles.com पर ऑनलाइन उपलब्ध

© एग्री आर्टिकल्स, आई. एस. एस. एन.: 2582-9882

प्राकृतिक कृषि: टिकाऊ खेती की ओर एक कदम

रामलखन सोनी¹, अनिल कुमार सिंह², अभय सिंह², *ऋतुराज³ एवं मिथिलेश कुमार¹

¹शोध छात्र, आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, अयोध्या, भारत

³शोध छात्र, भूमि संरक्षण एवं जल प्रबंधन, चन्द्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कानपुर

²सीनियर रिसर्च फेलो, ICAR-IIPR, कानपुर, उत्तर प्रदेश, भारत

*संवादी लेखक का ईमेल पता: riturajsingh245@gmail.com

भारतीय कृषि एक महत्वपूर्ण परिवर्तन के दौर से गुजर रही है। हरित क्रांति के बाद खेती की उपज तो बढ़ी, लेकिन उसके दुष्परिणाम जैसे मृदा क्षरण, जल प्रदूषण, कीटनाशक अवशेष और किसानों की बढ़ती लागत ने टिकाऊ खेती पर सवाल खड़े कर दिए। ऐसे समय में प्राकृतिक कृषि एक वैकल्पिक और सुरक्षित रास्ता बनकर उभर रही है, जो न केवल पर्यावरण के अनुकूल है बल्कि किसानों की आय और भूमि की उर्वरता को भी बढ़ावा देती है।

प्राकृतिक कृषि की परिभाषा

प्राकृतिक कृषि एक ऐसी कृषि प्रणाली है जो रसायन रहित होती है तथा जिसमें पशुपालन आधारित विधियों और विविध फसल प्रणाली का समावेश होता है। यह पद्धति भारत के पारंपरिक कृषि ज्ञान पर आधारित है और स्थानीय कृषि जलवायु परिस्थितियों तथा स्थान-विशिष्ट तकनीकों के अनुसार विकसित की गई है। प्राकृतिक कृषि के प्रमुख लाभों में बहुफसली प्रणाली के माध्यम से फसल तीव्रता में वृद्धि, मृदा जैविक पदार्थों की मात्रा में वृद्धि, मृदा उर्वरता में सुधार, किसानों के आहार में विविधता, उत्पादन लागत में कमी आदि शामिल हैं। इस प्रणाली की समझ भारत भर में प्रचलित पारंपरिक कृषि पद्धतियों पर आधारित है। प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग, मल्लिचंग (आवरण), हरित आवरण जैसे उपाय मृदा में जैविक पदार्थों की मात्रा और जल रिसाव को बढ़ाते हैं, मृदा की संरचना में सुधार करते हैं और पोषक तत्व चक्र व मृदा संरचना को सशक्त बनाते हैं।

विविध प्रकार की फसलें उगाने से लाभदायक

बनता है जो परागण, प्राकृतिक कीट नियंत्रण और खाद्य श्रृंखला के संतुलन जैसे पारिस्थितिकी सेवाएं प्रदान करते हैं। इससे कीट प्रकोप की संभावना कम होती है तथा खरपतवार पर भी नियंत्रण होता है। प्राकृतिक कृषि एक ऐसी पद्धति है जिसमें रासायनिक उर्वरकों, कीटनाशकों और बाहरी संसाधनों का प्रयोग न के बराबर होता है। इसमें देशी गाय के गोबर और गौमूत्र, जैविक पदार्थों और प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग कर मिट्टी की उर्वरता और फसल की पैदावार बनाए रखी जाती है। डॉ. सुभाष पालेकर द्वारा विकसित यह पद्धति "शून्य बजट प्राकृतिक कृषि" (ZBNF) के नाम से भी जानी जाती है।

प्राकृतिक कृषि के चार मुख्य स्तंभ (डॉ. सुभाष पालेकर के अनुसार)

1. जीवामृत- देशी गाय के गोबर, गौमूत्र, गुड़, बेसन और मिट्टी से बना एक जैविक घोल जो मिट्टी में सूक्ष्मजीवों की संख्या बढ़ाता है।
2. बीजामृत - यह बीजों को अंकुरण के पहले रोगों से बचाने के लिए देशी विधि है।
3. अच्छादान (मल्लिचंग) मिट्टी की सतह को पत्तियों, फसल अवशेषों से ढंक कर जल संरक्षण और खरपतवार नियंत्रण में प्रभावी है।

4. वापसा मृदा में नमी और हवा का संतुलन बनाए रखने की प्रक्रिया।

प्राकृतिक कृषि और टिकाऊ विकास के बीच संबंध

मृदा की रक्षा: रासायनिक उर्वरकों से दूर रहकर प्राकृतिक कृषि मिट्टी की जैविक गुणवत्ता को बढ़ाती है।

जल संरक्षण: सूक्ष्मजीवी गतिविधियों में वृद्धि के कारण जल धारण क्षमता बढ़ती है।

पर्यावरणीय लाभ: ग्रीनहाउस गैसों का उत्सर्जन कम होता है व कीटनाशकों का उपयोग न होने से प्रदूषण नहीं होता है।

कृषि लागत में कमी: खाद, कीटनाशक, सिंचाई जैसे बाहरी इनपुट पर खर्च घटता है।

सुरक्षित खाद्य उत्पादन: जैविक व प्राकृतिक तरीके से उगाई गई फसलें स्वास्थ्यवर्धक होती हैं।

प्राकृतिक खेती की चुनौतियाँ

1. आरंभिक उपज में गिरावट: रासायनिक आदानों से हटने पर शुरुआत में उपज में कमी हो सकती है।

2. तकनीकी जानकारी की कमी: अधिकांश किसान प्राकृतिक कृषि की विधियों से परिचित नहीं हैं।

3. बाजार और ब्रांडिंग: जैविक प्राकृतिक उत्पादों को उचित मूल्य दिलाने हेतु बाजार व्यवस्था कमजोर है।

4. नीतिगत समर्थन की कमी: सब्सिडी और प्रशिक्षण की सीमित उपलब्धता।

प्राकृतिक खेती की विशेषताएँ

1. प्राकृतिक खेती का मानना है कि पौधे अपने कुल पोषक तत्वों का लगभग 98% भाग वायु, जल और सूर्य के प्रकाश से प्राप्त करते हैं, जबकि शेष 2% पोषक तत्व मृदा में उपस्थित लाभकारी सूक्ष्मजीवों के माध्यम से मिलते हैं।

2. मिट्टी को सदैव जैविक मल्ल (जैविक अच्छादन) से ढका रहना चाहिए जिससे ह्यूमस का निर्माण होता है और लाभकारी सूक्ष्मजीवों की वृद्धि होती है।

3. रासायनिक खादों के स्थान पर खेत में निर्मित जैविक घोल जैसे जीवामृत, बीजामृत आदि का प्रयोग मृदा में सूक्ष्मजीवों की सक्रियता को बढ़ाने के लिए किया जाता है। ये घोल देशी नस्ल की गाय के गोबर और गौमूत्र से बहुत ही कम मात्रा में बनाए जाते हैं।

4. यह प्रणाली किसानों की आय बढ़ाने की क्षमता रखती है तथा कई लाभ देती है जैसे ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन में कमी, मृदा की उर्वरता की पुनर्स्थापना और पर्यावरणीय स्वास्थ्य में सुधार।

5. इस प्रणाली के लिए देशी गाय का गोबर और गौमूत्र आवश्यक होता है, क्योंकि देशी गाय के गोबर और गौमूत्र में उपस्थित सूक्ष्मजीवों की जैविक संरचना सबसे शुद्ध और प्रभावी मानी जाती है।

6. प्राकृतिक खेती में न तो रासायनिक और न ही जैविक खादों का उपयोग किया जाता है। मृदा और पौधों को कोई भी बाहरी उर्वरक नहीं दिया जाता।

7. प्राकृतिक खेती में केंचुए और बैक्टीरिया जैसे सूक्ष्मजीवों को बढ़ावा दिया जाता है, जो सतही जैविक पदार्थों को धीरे-धीरे विघटित कर मृदा में पोषक तत्व जोड़ते हैं।

8. निराई-गुड़ाई (Weeding) प्रकृति की तरह बिना खाद, जुताई या मिट्टी पलटने के की जाती है, जैसे कि प्राकृतिक पारिस्थितिकी तंत्र में होता है।

9. कीट और रोगों से बचाव के लिए प्राकृतिक कीटनाशकों जैसे दशपर्णी अर्क, नीमास्र आदि का प्रयोग किया जाता है।

10. एकल फसल (Single Crop) के स्थान पर बहुफसली प्रणाली (Multiple Cropping) को बढ़ावा दिया जाता है, जिससे मृदा की उर्वरता, कीट नियंत्रण, और उत्पादन में विविधता बनी रहती है।

बीजामृत

बीजामृत एक जैविक सूक्ष्मजीव घोल होता है जिसे देशी गाय के ताजे गोबर और गौमूत्र से बनाया जाता है। यह बीज उपचार और पौधों की जड़ों को डुबोने के लिए उपयोग किया जाता है।

सामग्री:

देशी गाय का ताजा गोबर 5 किलोग्राम

देशी गाय का गौमूत्र - 5 लीटर

कुमारी मिट्टी (जैसे जंगल या वटवृक्ष की जड़ से) 50-100 ग्राम

कैल्शियम क्लोराइड - 50 ग्राम

पानी - 20 लीटर

बनाने की विधि:

1. सभी सामग्री को एक साफ बर्तन में मिलाएं।
2. मिश्रण को अच्छी तरह घंटों तक हिलाकर मिलाएं।
3. इसे 24 घंटे तक ढककर किण्वित होने दें।
4. फिर इसका प्रयोग बीज उपचार के लिए करें।

उपयोग:

बीजों को इस घोल में डुबोकर छाया में सुखाया जाता है। यह प्रक्रिया बीजों को मृदा जनित व बीज जनित रोगों से बचाती है। अंकुरण समय को कम करती है और पौधों की शुरुआती वृद्धि को तेज करती है। इसमें उपस्थित सूक्ष्मजीव बीजों के साथ मृदा में पहुँचते हैं और पौधों की जड़ों को रोगों व कीटों से सुरक्षा प्रदान करते हैं। यह जड़ों का सूखा भार, जड़ प्रसार, तथा नाइट्रोजन, पोषक तत्व व जल ग्रहण करने की क्षमता को सशक्त बनाता है।

घनजीवामृत

घनजीवामृत को एक ठोस रूप में तैयार किया जाने वाला जैविक उर्वरक है। यह मिट्टी में लाभकारी सूक्ष्मजीवों की संख्या बढ़ाने और पोषण सुधारने में सहायक है।

सामग्री

देशी गाय का गोबर - 150 किलोग्राम

गुड़ - 1 किलोग्राम

दालों का आटा (चना, मूंग आदि)-2 किलोग्राम

कुमारी उर्वर मिट्टी-50-100 ग्राम

देशी गाय का गौमूत्र आवश्यकता अनुसार

बनाने की विधि :

1. गोबर, गुड़, दाल का आटा और मिट्टी को अच्छे से मिलाएं।
2. जरूरत के अनुसार थोड़ा सा गौमूत्र मिलाएं।
3. इस मिश्रण को छाया में 2-4 दिन तक सुखाएं।
4. पूरी तरह सूखने के बाद इसे पीसकर छोटे-छोटे दानों के रूप में बना
5. इसे 6 महीनों तक संग्रहित कर उपयोग किया जा सकता है।

जीवामृत

जीवामृत एक किण्वित जैविक सूक्ष्मजीव घोल है जो खेत पर ही उपलब्ध सामग्री से तैयार किया जाता है। यह घोल मिट्टी में लाभकारी सूक्ष्मजीवों की सक्रियता को बढ़ाकर पौधों की वृद्धि और पोषण को बेहतर बनाता है।

सामग्री:

देशी गाय का ताजा गोबर 10 किलोग्राम

देशी गाय का गौमूत्र 10 लीटर

गन्ने का गुड़ या किसी भी फल का गूदा 1.5 किलोग्राम

किसी दलहन (चना/अरहर/मूंग) का आटा 1.5 किलोग्राम

पानी- 180 लीटर

कुमारी मिट्टी (जैसे बटवृक्ष या जंगल की मिट्टी) 50-100 ग्राम

बनाने की विधि:

1. सभी सामग्री को एक बड़े साफ प्लास्टिक ड्रम या बरतन में डालें।
2. मिश्रण को अच्छी तरह घंटे भर हिलाएं और छाया में रखें।
3. घोल को दिन में कम से कम एक बार हिलाना जरूरी है ताकि सूक्ष्मजीव सक्रिय रहे।

4. गर्मी में 3-4 दिन, जबकि सर्दी में 6-7 दिन में यह घोल तैयार हो जाता है।

प्रयोग की विधियाँ:

तैयार जीवामृत को प्रति एकड़ 200 से 600 लीटर की मात्रा में प्रयोग किया जाता है। इसे महीने में दो बार खेत में दिया जाता है।

उपयोग के तरीके:

सिंचाई जल के साथ मिलाकर देना (फव्वारा, ड्रिप या नाली सिंचाई)। फोलियर स्प्रे (पत्तियों पर छिड़काव) के रूप में मिट्टी पर सीधे डालना।

जीवामृत के लाभ:

मिट्टी में सूक्ष्मजीवों की गतिविधि को प्रोत्साहित करता है (जैसे केंचुए, बैक्टीरिया आदि)।

पौधों को आवश्यक पोषक तत्वों की उपलब्धता बढ़ाता है।

मृदा की जीवंतता व उर्वरता को पुनर्स्थापित करता है।

लगातार उपयोग से खेत में जैविक संतुलन और पौधों की रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ती है।

देशी गाय के गोबर व गौमूत्र से तैयार जीवामृत में अधिक लाभकारी सूक्ष्मजीव होते हैं इसलिए यही सर्वोत्तम माना जाता है।

अच्छादन (मल्लिंग)

प्राकृतिक खेती में मृदा सतह पर अच्छादन को अत्यंत महत्वपूर्ण माना जाता है क्योंकि यह मिट्टी की नमी बनाए रखने, तापमान को संतुलित रखने, खरपतवार नियंत्रण तथा सूक्ष्मजीव गतिविधियों को प्रोत्साहित करने में सहायक होता है। प्राकृतिक खेती में तीन प्रकार के अच्छादन को बढ़ावा दिया जाता है:

(i) मृदा अच्छादन - इसमें सामान्य जुताई की जाती है, लेकिन जुताई की गहराई केवल 10-15 सेमी तक सीमित रखी जाती है, जिससे मिट्टी की ऊपरी सतह की संरचना बनी रहती है।

(ii) फसल अवशेष अच्छादन इसमें पूर्ववर्ती फसल के सूखे पौधे या भूसे को खेत की सतह पर बिछाया जाता है, जिससे खरपतवारों का अंकुरण कम होता है और मिट्टी को ढकने से नमी सुरक्षित रहती है।

(iii) जीवित अच्छादन इसमें मुख्यतः दलहनी फसलों को एकल बीजपत्री फसलों (जैसे धान, गेहूं, रागी आदि) के साथ अंतरवर्तीय रूप में उगाया जाता है, जिससे मिट्टी को फास्फोरस, पोटैश और सल्फर जैसे पोषक तत्व प्राकृतिक रूप से मिलते हैं।

फसल बोने के तुरंत बाद फसल अवशेषों से अच्छादन करने से खेत में खरपतवारों के अंकुरण को रोका जा सकता है साथ ही यह विधि पर्यावरणीय दृष्टि से भी बहुत लाभकारी है।

व्हापासा

व्हापासा उस मृदा अवस्था को कहा जाता है जहाँ फसल की जड़ क्षेत्र में जल और वायु अणुओं का संतुलित मिश्रण मौजूद होता है। यह स्थिति पौधों की जड़ों के लिए सबसे उपयुक्त होती है क्योंकि इसमें न

अधिक नमी होती है और न ही अत्यधिक सूखापन, जिससे पौधों को जल और पोषक तत्वों की बेहतर उपलब्धता सुनिश्चित होती है। प्राकृतिक खेती में व्हापासा की स्थिति को बढ़ावा दिया जाता है, जिसके लिए निम्नलिखित उपाय अपनाए जाते हैं:

1. कम से कम सिंचाई देना
2. जुताई की गहराई को सीमित रखना
3. फसल अवशेषों से अच्छादन (मल्लिंग) द्वारा मृदा में ह्यूमस की मात्रा को बढ़ाना,
4. जैविक घोलों (जैसे जीवामृत) का प्रयोग।

व्हापासा की स्थिति को बनाए रखने से फसलों की जल उपयोग दक्षता में उल्लेखनीय वृद्धि होती है। खेतों में यह स्थिति माइक्रो इरिगेशन तकनीकों (जैसे ड्रिप व स्प्रींकलर सिंचाई प्रणाली) के माध्यम से जीवामृत को सीमित मात्रा में और जड़ों के पास पहुंचाकर प्राप्त की जा सकती है। इसके अतिरिक्त, वैकल्पिक नाली सिंचाई तथा सरज सिंचाई प्रणाली को भी अपनाया जा सकता है।

निष्कर्ष

प्राकृतिक खेती एक समग्र एवं टिकाऊ कृषि प्रणाली है जो स्थानीय एवं सुलभ संसाधनों के उपयोग पर आधारित होकर मिट्टी की उर्वरता, पोषण चक्र तथा जैव विविधता को सुदृढ़ करती है। यह पद्धति रासायनिक इनपुट्स पर निर्भरता को घटाकर खेती की लागत कम करती है तथा दीर्घकालिक रूप से उत्पादन प्रणाली की स्थिरता और किसानों की आय में वृद्धि सुनिश्चित करती है। जलवायु परिवर्तन की चुनौतियों और पर्यावरणीय असंतुलन की वर्तमान परिस्थितियों में प्राकृतिक खेती कृषि क्षेत्र के लिए एक व्यवहार्य विकल्प सिद्ध हो सकती है। अतः व्यापक स्तर पर इसके अंगीकरण से न केवल सतत कृषि विकास संभव है, बल्कि मानव स्वास्थ्य एवं पर्यावरण संरक्षण की दिशा में भी यह एक महत्वपूर्ण कदम है।